निराला के काव्य में: प्रेम और श्रृंगार

*डॉ. सत्य नारायण शर्मा

Abstract

महाप्राण निराला के काव्य में जहाँ एक ओर चिन्तन की गम्भीरता है वही दूसरी ओर जीवन के आह्लाद के प्रति उनमें सहज अनुराग और आकर्षण भी हैं। वे सौन्दर्यं से आकृष्ट होते हैं तथा उसे भोगने की बलवती इच्छा उनमें विद्यमान है। उन्हें प्रकृति का सौन्दर्यं जिस प्रकार आकर्षित करता है उसी प्रकार वे नारी के सौन्दर्यं से भी आकर्षित होते है। सृष्टि के आदिकाल से ही पुरूष और प्रकृति का आकर्षंण स्वाभाविक रूप से रहा है। यही कारण है कि स्त्री और पुरूष का आकर्षण भी स्वाभाविक होने के कारण त्याज्य नहीं है श्रृंगार के प्रति यह सहज आकर्षण निराला की ही भाँति सभी छायावादी कवियों में है। निराला ने प्रेम और श्रृंगार को व्यापक धरातल पर प्रतिष्ठित किया। प्रसाद ने श्रृंगार के मूल में विद्यमान काम को सृष्टि के विकास का आधार माना है। पन्तजी पुरूष और स्त्री के आकर्षण को सहज मानते हुए इसे सभी रूढ़ियों से मुक्त कराने का आह्वान करते हैं। उनकी श्रृंगारिक चेतना इतनी प्रबल है कि वे समस्त प्रकृति की कल्पना नारी के रूप में करते है। महादेवी जी आत्मा–परमात्मा सम्बन्ध में दाम्पत्यभाव आरोपित करती है। इन सभी कवियों के श्रृंगार में वासना की गन्ध नहीं है। स्त्री और पुरूष के आकर्षण को सहज मानकर वे इसका पर्यवसान प्रेम में करते हैं। प्रेम इनके लिए एक अत्यन्त पवित्र भाव है जो समस्त सृष्टि में व्याप्त है।

छायावादी काव्य में प्रेम और श्रृंगार का आध्यात्मीकरण हुआ है। प्रेम में परमात्मा का सत्य, शिव और सुन्दर तीनों रूप समाहित है। परमात्मा के सत्य स्वरूप का परिणत रूप ही प्रेम सौन्दर्यं तथा शिवत्व की पवित्र भावना है। पन्त ने इसी परिणति को निम्नलिखित रूप से अंकित किया है।

वही प्रज्ञा का सत्य स्वरूप
हृदय में बनता प्रणय अपार,
लोचनों में लावण्य अनूप
लोक सेवा में शिव अविकार।[1]

परमात्मा का उल्लास सृष्टि में विविध रूपों में व्यक्त हो रहा है। सागर की तरंग में तथा आकाश के नील विस्तार में उसी का उल्लास व्याप्त है। वही हृदय में प्रेमोच्छ्वास, काव्य के रस, फूलों में सुगन्ध, अचल तारक पलकों में हास, चंचल लहरों में लास के रूप में अभिव्यक्त हो रहा है।

निराला भी प्रेम और श्रृंगार को परमात्मा के आनन्दमय स्वरूप की अभिव्यक्ति मानते है। प्रकृति के सौन्दर्यं पर वे इसी

भाव से मुग्ध होते हैं तथा नारी–पुरूष के सम्बन्धों को इसी भाव से देखते हैं। इसीलिए उनके श्रृंगार चित्रण में मांसलता के साथ उदात्तता का भाव रहता है। निराला ने प्रेम की सात्विकता, व्यापकता और परिष्कृत क्षमता का अनेकशः उल्लेख किया है। 'पंचवटी प्रसंग' में प्रेम का विश्लेषण करते हुए राम ने कहा है कि प्रेम सभी क्षुद्र भावों को नष्ट कर देता है। इसका महासमुद्र जब उमड़ता है तब यह सांसारियों के सभी क्षुद्र मनोवेगों को तिनके के समान बहा ले जाता है। इस महासागर में गोते लगाना साहस का कार्य है। कायर किनारे पर खड़े होकर हाथ मलते रह जाते है। दिव्य शरीरधारी ही इसमें प्रवेश कर प्रेमामृत प्राप्त करते हैं। ऋषि–मुनियों ने यह प्रेमामृत प्राप्त कर लिया है। इसीलिए सभी प्रकार की भेदभावना से ऊपर उठकर वे सभी के प्रति प्रेम भाव रखते है।

निराला जी ने 'प्रेम के प्रति' कविता में प्रेम को सृष्टि का आदि कारण कहा है। इसी से विविध नामरूपात्मक जगत का विकास हुआ। जिस प्रकार एक ही तत्व जल, वाष्प, और मेघ के रूप में भिन्न–भिन्न आकार ग्रहण करता है, विद्युत की माया ही इनमें मूल कारण बनती है, उसी प्रकार एक ही चेतन तत्व प्रेम के आकर्षण से खिचकर भिन्न–भिन्न रूपों में व्यक्त होता है। यह नाम रूपात्मक भेद मिथ्या है।

तत्वों के त्वक् बदल–बदल कर
बारि वाष्प ज्यों फिर बादल
विद्युत की माया उर में तुम
उतरे जग में मिथ्या फल।[2]

वासना का यही रूप लोगों को आकर्षित करता है। रूप को बाहुओं में बाँधकर लोग प्रेम को पा लेने का भ्रम कर बैठते हैं। इसे प्रेम की छाया समझनी चाहिए। प्रेम हृदयों को जोड़ता है। यह वह धागा है जो हृदयों को जोड़कर प्राणियों को माला बना देता है तथा स्वयं अदृश्य रहता है।

प्रेम, सदा ही तुम असूत्र हो
उर–उर के हीरों का हार,
गूंथे हुए प्राणियों को भी
गुंथे न कभी, सदा ही सार।[3]

प्रेम सृष्टि का आधार है। जीव–प्रेम से ही ब्रह्म तक पहुँचा जा सकता है। स्वार्थ विहीन प्रेम ही मुक्ति का मार्ग है। प्रेमयुक्त हृदय स्वार्थ की मलिनता को अग्नि कुण्ड में डाल कर पवित्र हो जाता है। निराला प्रेम को लोक सेवा आत्म–परिष्कार और प्राणिमात्र की एकता का आधार मानते है। सभी प्राणियों को ईश्वर की प्रति'–छवि मानकर निराला लोकसेवा का उपदेश देते है। उन्होंने 'सम्राट् अष्टम एडवर्ड के प्रति' कविता में प्रेम को ईश्वर से स्पर्श से पवित्र भाव कहा है। इसकी अनुभूति के तार मनुष्य मात्र के समान रूप से झंकृत होते है। जाति और वर्ग की बाधाएँ अतिक्रांत करके इसकी शक्ति से दो हृदय एक दूसरे से मिल जाते है। प्रेम का यही दैवी रूप निराला को स्वीकार है।

ये दीपक जिसके सूर्य–चन्द्र,
बँध रहा जहाँ दिग्देश काल,
सम्राट! उसी स्पर्श से खिली
प्रणय के प्रियंगु की डाल–डाल।[4]

प्रेम का सम्बन्ध राग–चेतना से है। इसके तीव्र वेग में सभी प्रकार की भेदबुद्वि समाप्त हो जाती है। इस भाव भूमि में हृदय की समस्त विकृतियाँ समाप्त हो जाती हैं और सभी विषमताएँ नष्ट हो जाती हैं। निराला ने प्रेम का सैद्वांन्तिक

निरूपण ही नहीं किया अपितु इसकी अनुभूति का मनोवैज्ञानिक चित्रण भी किया है। 'प्रेयसी' कविता में यौवन के आगमन से उत्पन्न नारी हृदय की अनुभूति का चित्रण है तो 'रेखा' में पुरूष हृदय में यौवन से आगत परिवर्तन की सूक्ष्म रेखाओं का अंकन है। यौवन की प्रथम तरंगलहरी ने उसके अंग–अंग को घेर लिया और वह ज्योतिमयी लता के समान अपने शरीर रूपी वृक्ष से लिपट गयी। चातुदिक् आनन्द के निर्झर झरने लगे। अन्तर पुलक–राशि से भर गया। यह चक्राकार कलरव तरंगों के बीच उठी हुई उर्वशी के समान हुआ है। इसमें उसे रेखा का चित्रण है जो यौवन के तीर पर प्रथम सौन्दर्य स्त्रोत के अवतरित होने पर खिंची थी। यौवन के अवतरित होते ही वह अकूल का साथी हो गया। जीवन की जड़ता दूर हो गई, प्रेम का प्रसार समस्त प्रकृति में दिखाई पड़ने लगा। प्रिय का साक्षात्कार होने पर यह असीमता एक सीमा में केंन्द्रित हो गई। इस अवस्था का चित्रण कवि ने किया है।

मेरी ध्रुवतारा तुम
प्रसरित दिगन्त से
अन्त में लाई मुझे
सीमा में दिखी असीमता
एक स्थिर ज्योति में
अपनी अबाधता
परिचय निज पथ पर स्थिर।[5]

प्रणय की यह व्यापक भावना समस्त प्रकृति में व्याप्त है। प्रथम मिलन की प्रणयानुभूति का सूक्ष्म चित्रण 'राम की शक्तिपूजा' में स्मृति रूप में हुआ है। इस मिलन की प्रत्येक चेष्टाओं और अनुभूतियों को बड़ी कुशलता से अंकित किया गया है। इस मिलन में नयनों का नयों से गोपन, सम्भाषण का, पलकों का पलकों पर प्रथम उत्थान–पतन का प्रथम कम्प से तुरीयावस्था में पहुँची स्थिति का उल्लेख किया गया है। उपवन के मादक वातावरण में घटित यह दृश्य सात्विक श्रृंगार का सुन्दर उदाहरण है। निराला का यह 'चित्रण तुलसी के पुष्पवाटिका प्रसंग से मिलता है किन्तु निराला के इस वर्णन में प्रणयानुभूति की जो भावाकुल अलौकिकता, तथा व्यापकता है वह तुलसी की सहज अभिव्यक्ति में नहीं है। निराला के वर्णन में 'नयनों का नयनों से गोपन–प्रिय सम्भाषण' हो जाता है। नयनों का वह गोपन–सम्भाषण और पुनः पलकों का उत्थान–पतन! प्रेम की इस दशा में निराला के राम को सम्पूर्ण प्रकृति प्रेमोन्त दिखाई पड़ती है। जिसमें किसलय काँप रहे है, फूलों से पराग झर रहे हैं, पक्षी नवीन जीवन के परिचय का गीत गा रहे हैं और तरू मलय पवन से वलयित हो उठे हैं। लगता है स्वर्गीय ज्योति का प्रपात झर रहा है। प्रणयानुभूति का यह भावाकुल तथा अलौकिक चित्रण चित्ताकर्षक है।

देखते हुए निष्पलक याद आया उपवन
विदेह का, प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन
नयनों का नयनों से गोपन, प्रिय सम्भाषण
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान पतन
काँपते हुए किसलय झरते पराग समुदय
गाते खग नव जीवन परिचय तरू मलय बलय
ज्योतिः प्रपात स्वर्गीय–ज्ञात छवि प्रथम स्वीय
जानकी नयन कमनीय प्रथम कम्पन तुरीय।[6]

निराला के रूप चित्रण में मादकता का आधिक्य है। नारी के मादक सौन्दर्यं का चित्रण कवि ने अनेकशः कविताओं में

किया है। मादक चित्रों की मांसलता उन्हें प्रिय है। सद्यः स्नाता के मांसल चित्र उन्होंने प्रस्तुत किये है।

नग्न बाहुओं से उछालती तीर
तरंगों में डूबे दो कुमुदों पर
हँसता था एक कलाधर
ऋतुराज दूर से देख उसे होता था अधिकधीर।[7]

सद्यः स्नाता की प्रत्येक रेखा को निराला ने रेखांकित किया है। तट पर सजल रेखाएँ अंकित करती हुई सुन्दरी धीर–धीरे जा रही है। उसके केशभार जल से सिक्त है। उसके नेत्रों की ओर देखकर नव बसन्त पत्रों में काँप उठता है। अंग–अंग में नवयौवन उच्छृंखल हो रहा है किन्तु लावण्यपाश से बँधा हुआ है। वायु सेविका–सी आकर दोनों स्तन, भुजा और अधर पोंछ देती है। सब ओर देखकर युवती मन्द–मन्द हँसती है और उन्नत पीर उरोजो को छिपा लेती है। श्रृंगारिक चित्रों को कहीं–कहीं ऐन्द्रिय स्पर्शों द्वारा जान बूझकर उत्तेजक बनाया गया है। 'स्फटिक शिला' में कवि की दृष्टि एक युवती पर पड़ती है जो स्नान करके आयी है। उसकी भरी देह पर गीली साड़ी सटी हुई है। उसके उठे पुष्ट स्तन दुष्ट मन को मरोड़कर रख देते हैं। कवि को दृष्टि वर्तूल उठे हुए उरोजों पर पड़ती है। ऐसे चित्रों की उदाम श्रृंगारिक चित्र विद्यापति के श्रृंगार चित्रों की भाँति मनोरम बन गये हैं।

निराला श्रृंगार को समस्त वर्जनाओं से मुक्त करना चाहते थे। नारी सौन्दर्य के दर्शन की लालसा एक स्वाभाविक मनोवृत्ति है। इसलिए नारी सौन्दर्य को उन्होंने उन्मुक्त अभिव्यक्ति दी है। स्वयं निराला की अभिलाषा है।

दूर ग्राम की कोई वामा
आये मन्द चरण अभिरामा
उतरे जल पर अबसन श्यामा
अंकित उर छवि सुन्दरतर हो।[8]

उपर्युक्त कामना जीवन को सुन्दर बनाने के क्रम में की गई है। निराला वासनाओं को दमित करने के पक्ष में नहीं है। इसे निरावरण कर वे लज्जित नहीं होते है। मिलन के चित्रों में भी वैसी ही उदामता और उन्मुक्तता हैं उनकी प्रसिद्ध रचना 'नयनों के डोरे लाल गुलाब भरे' में मिलन की उदामता और उससे उत्पन्न आह्लाद का चित्रण है। 'स्पर्श से लाज भरी' कविता में नारी, सुलभ लज्जा का, फिर प्रेम में प्रगल्भ होने, इच्छा तृप्ति पर प्रसन्न होकर सांसारिक भय से मुक्त होने का पूर्ण चित्र है। नारी के मिलनजन्य प्रगल्भता के ये चित्र बड़े मादक है।

प्रेम चयन के उठा नयन नव,
विधु चितवन मन में मधु कलरब,
मौन पान करती अधरा सब
कण्ठ लगी उरगी।[9]

प्रेमातिरेक से उसकी आँखें ऊपर गयीं, उसकी दृष्टि में चन्द्रमा की शीतलता आ गयी और मन में मधुमय कलरव गूँजने लगा। कण्ठ लगी सपिणी के समान मौन होकर वह अधरासव पान करने लगी। हिन्दी में इस प्रकार के गीत कम लिखे गये हैं जहाँ रूप सौन्दर्य में इतनी पूर्णता हो। इस चित्रण में निराला ने भावों का संवर्द्धन करके मनुष्य की सहज भावनाओं को उच्चता प्रदान की है।

मिलन और उससे उत्पन्न आह्लाद के चित्र कवि ने अनेक स्थलों पर अंकित किये हैं। इसमें प्रिया के हृदय का हरिक

हार चमक उठता है। वह प्रणय का अमर प्रसार पाती है। निराला की प्रसिद्ध रचना 'जुही की कली' में मिलन से उत्पन्न आनन्द का चित्रण तो भव्यता से हुआ ही है, पुरूष के प्रगल्भ प्रेम का भी निरूपण हुआ है। मलयानिल को जब अपनी प्रिया जुही की याद आती है त बवह उपवन–सर–सरित–गहन गिरि कानन तथा कुंजलता–पुंजों को पारकर अपनी प्रिया के पास पहुँचता है और उसके कपोल चूम लेता है। इस पर भी प्रिया न जागती है और न ही अपनी चूक के लिए क्षमा माँगती है। तब वह निर्दयनायक अपनी निष्ठुरता प्रदर्शित करता है। वह झोकों की झड़ियों से उसकी सुकुमार देह झकझोर देता है और गोरे गोल कपोल मसल देता है। वह युवती इससे चौंककर अपने प्रियतम को पास पाकर प्रसन्न हो जाती है। मिलन सुख की पूर्णता का चित्रण कवि ने बड़े आह्वान से किया है।

चौंक पड़ी युवती
चकित चितवन निष चारों ओर फेर,
हेर प्यारे को सेजपास
नम्र मुख हँसी–खिली
खेल रंग प्यारे संग।[10]

निराला के दारा निबद्ध अभिसार के चित्र बड़े मनोहारी हैं। कवि ने ऐसे चित्रण विशेष रसात्मकता से प्रस्तुत किये हैं। नायिका प्रिय से मिलने जा रही है। उसके श्रृंगारिक प्रसाधन ध्वनित होते हैं जिससे उसे लज्जा की अनुभूति होती है। पायल, कंकण और किंकिणी की ध्वनि से वह लज्जित होकर लौट जाना चाहती है। फिर वह मन से सोचती है कि यदि नायक ने शब्द सुन लिया होगा तो लौट कर कहाँ जायेगी? उन चरणों को छोड़कर अन्यत्र शरण कहाँ? 'प्रिय यामिनी जागी' गीत में प्रिय के लिए रात्रि जागरण का चित्र है। उसकी कमल सदृश अलसायी आँखें सूर्य के समान मुख वाले प्रिय को देखकर खिल उठी है। शोभा सम्पन्न उसके केश पीठ, बाहु और हृदय पर लहरा रहे हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि मानों सूर्य बादलों को ढका है। वह ज्योति की पतली रेखासी है किन्तु उसके तेज के समक्ष बिजली भी लज्जित हो जाती है। वह वास्तव में वासना से मुक्ति का माध्यम है। निराला नारी को इसी रूप में देखते हैं। उनकी नारी वासनामयी नहीं वह पुरूष को उसकी वासना से मुक्त करती है। वह त्याग और समर्पण से सभी को वशीभूत कर लेती है। वह त्याग के धागे में गुँथा हुआ मोती है।

वासना की मुक्ति, मुक्त
त्याग में तागी।[11]

पति के प्रति नारी के सात्विक प्रेम की अभिव्यक्ति के पक्षपाती निराला रहे हैं। मिलन के इन चित्रों में उछामता के साथ सात्विकता भी है। नारी को 'वासना की मुक्ति' कहकर उन्होंने उसे उसके गरिमामय पद को प्रतिष्ठित किया है। श्रृंगार को वर्जना न समझकर उन्होंने इसे सहज वृत्ति के रूप में ग्रहण किया तथा इसके सबसे उछाम चित्र इन्होंने ही अंकित किये। मिलन के चित्रों के अतिरिक्त इनके विरह में भी प्रगाढ़ता है। यद्यपि मिलन की अपेक्षा विरह के चित्र कवि ने कम ही अंकित किये है। उनकी 'प्रिया के प्रति' कविता करूणा ब्रिपलम्भ का अप्रतिम उदाहरण है। उन्होंने अपनी दिवंगता पत्नी के प्रति अपने हृदय की व्यथा उड़ेल दी है। अपीन कसावट और भावव्यंजकता की दृष्टि से यह रचना अप्रतिम है। इसमें कवि की व्यथा प्रगाढ़ हो गई है। मिलन के क्षण के सहसा वियोग में बदल जाने की सम्भावना से उत्पन्न व्यथा अत्यन्त मार्मिक है।

हुआ प्रात प्रियतम, तुम जावगे चले
कैसी थी रात, बन्धु, थे गले–गले।[12]

विरह–विदग्धा–वधू पिछली मिलन की बातें याद कर व्याकूल होती है। कवि ने विरह भाव का आरोप समस्त प्रकृति पर किया है। प्रिय के ध्यान में मग्न विरहिणी का एक चित्र अवलोकनीय है।

सोचती अपलक आप खड़ी
खिली हुई वह विरह वृन्त की
कोमल–कुन्द–कली
नयन–गगन, नवनील गगन में
लीन हो रहे थे निज धन में,
यह केवल जीवन के वन में
छाया एक पड़ी।[13]

निराला के रहस्मयी गीतों में भौतिक श्रृंगार आध्यात्मिक धरातल पर प्रतिष्ठित हुआ है। कवि की श्रृंगारिक चेतना का प्रसार समस्त प्रकृति में हुआ है। निराला ने समस्त प्रकृति को नारी–रूप में देखा है। 'तुलसीदास' में तुलसी की उर्ध्वचेतना का जब प्रसरण होने लगता है, तब उन्हें प्रकृति गृहिणी के रूप में दृष्टिगोचर होती है। पर्वत उसके उरोज तथा सरिताएँ दुग्धधाराएँ है। वृक्ष उसके हाथ हैं जिन्हें फैलाकर वह फल देती है। तृण–तृण पर वह सुधवृष्टि करती है। परम पुरूष की यह प्रैयसी नूतन वस्त्र परिवर्तन कर नये–नये रूपों में प्रकट होती है। प्रकृति के स्वर नारी के हाथों से झंकृत होते हैं। उसके सौन्दर्य की रागिनी की लहर पर्वत, वन, सरोवर सभी कुछ पारकर समस्त सृष्टि का आर्लिगन करने को व्याकुल है। यही लहर सुन्दरभाव के रूप में परिणत हो जाती है। वसन्त के आगमन का उल्लास भी नारी पुरूष के मिलन से उत्पन्न आह्वाद के रूप में व्यक्त हुआ है।

किसलय वसना नव वय लतिका
मिली मधुर प्रिय–उर तरू पतिका
मधुप वृन्द बन्दी
पिक स्वर नभ सरसाया।[14]

निराला ने 'जुही की कली,' 'शेकालिका', 'वनबेला', 'नर्गिस' कविताओं में प्रकृति के प्रणय व्यापार का उदाम चित्र अंकित किया है। निराला की श्रृंगार दृष्टि विराट् है। यह मानव–जीवन से प्रकृति के विराट् क्षेत्रतक फैली हुई है। उनके श्रृंगार चित्रण के तीन धरातल स्पष्ट हैं। श्रृंगार का नारी–पुरूष से सम्बन्द्ध स्वाभाविक धरातल, प्रकृति के विशाल क्षेत्र का धरातल तथा रहस्यात्मक अनुभूतियोयं का धरातल। नारी पुरूष सम्बन्धों में उदामता और सहजता है। कवि ने प्रकृति में विराट् प्रणय चित्रों का भाव उरेहा है। रहस्यात्मक अनुभूतियों में कवि की श्रृंगार भावना का उदात्तीकरण हो गया है।

निराला की सौन्दर्यं भावना का मूल उनके अर्द्धत दर्शन में है। सौन्दर्य चेतना की ही परिणति श्रृंगार में होती है इसीलिए श्रृंगार उनके लिए एक उदात्त भाव है। उदात्त होने के साथ–साथ ही यह सहज भी है। नारी और पुरूष का आकर्षण स्वाभाविक है। अतएव इसका दमन उचित नहीं है। इसी से निराला के श्रृंगार में जो उदामता मिलती है वह अन्य छायावादी कवियों में नहीं है। उदाम होते हुए भी निराला का श्रृंगार चित्रण वासनात्मक नहीं हे। नारी उनके लिए भोग्या नहीं, वासना की मृक्ति है। श्रृंगार में वासना के निषेध के कारण निराला ने प्रेम को पर्याप्त महत्त्व दिया है। प्रेम ही सृष्टि के विकास का आधार है। इसी के कारण संसार के लीलामय स्वरूप का निर्माण होता है। यह स्वयं सूत्रहीन होकर समस्त सृष्टि को एक सूत्र में आबद्ध किये हुए हैं। यह जीव को ब्रह्य से जोड़ने की आधाशिला है। यह वर्ण

और जाति भेद से ऊपर उठाकर मानव–मात्र में एकता का बोध कराता है। मानवतावादी प्रतिष्ठा में निराला का यही प्रेम आधार रहा है।

*व्याख्याता
विभाग हिन्दी
स्व. राजेश पायलट राजकीय महाविद्यालय
बाँदीकुई (दौसा)

संदर्भ

1. सुमित्रानन्दन पन्त – तारापथ, पृ.62
2. निराला–प्रेम के प्रति (निराला रचनावली भाग 1), पृ. 222
3. निराला रचनावली (प्रेम के प्रति), पृ. 221
4. वही, पृ. 338
5. वही, पृ. 172
6. कवि श्री, पृ. 32
7. निराला रचनावली (तट पर), पृ. 388
8. वही (विनय), पृ. 344
9. निराला रचनावली (स्पर्श से लाज लगी), पृ. 312
10. वही (जुही की कली), पृ. 68
11. वही (प्रिय यामिनी जागी), पृ. 253
12. निराला रचनावली (हुआ प्रात प्रियतम), पृ. 246
13. वही (सोचती अपलक आप खड़ी), पृ. 211
14. वही (सखि, वसन्त आया), पृ. 253